सावन की फुहार में ‘ कजरी ‘ का महत्व

सावन चल है जो इस भीषण तपिश से राहत ही नहीं प्रदान करेगा बल्कि अपनी मखमली हरियाली से मन मयूर को नाचने के लिए विवश कर देगा और फिर सावन नाम आते ही ‘कजरी‘ गीतों का उनसे जुड़ जाना स्वाभाविक ही है। गाँवों में जब युवतियाँ सावन में पेड़ों पर झूला झूलते समय समवेत स्वर में कजरी गाती है तो ऐसा लगता है कि सारी धरती गा रही हैं, आकाश गा रहा है, प्रकृति गा रही है। न केवल मानव प्रभावित है बल्कि समस्त जीव-जन्तु भी सावन की हरियाली व घुमड़-घुमड़ कर घेर रहे बादलों की उमंग से मदमस्त हो जाते हैं।

लोक साहित्य की एक सशक्त विधा है- लोकगीत। संवेदनशील हृदय की अनुभूतियों की संगीतात्मक-भावाभिव्यक्ति ही लोकगीत है, जिसका उद्भव लोक जीवन के सामूहिक क्रिया-कलापों, सामाजिक उत्सवों, रीतिरिवाजों, तीज-त्यौहारों इत्यादि से हुआ। लोकगीतों की परम्परा मौखिक है तथा पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती जाती है। इन लोक गीतों में जहाँ अपने अपने युग का सच छुपा है, वहीं उसमें मानव जाति की स्मृतियां, जीवन-शैली, सुख-दु:ख, संघर्षों की गाथायें और जीवन के प्रेरक तत्व छुपे हुए हैं।

देखा जाये तो अधिकांश लोकगीत किसी न किसी ऋतु या त्योहार के होते हैं। वर्षा ऋतु के आने पर लोगों के मन में जिस नये उल्लास व उमंग का संचार होता है, उस भाव की अभिव्यक्ति करती है- कजरी। ऋतुगीतों की श्रेणी में वर्षागीत के अन्तर्गत सावन में गाया जाने वाला यह गीत प्रकार विशेष लोकप्रिय है। इसका सम्बन्ध झूला से है। सावन में पेड़ों पर झूले पड़ जाते हैं पेड़ों की डालियों पर मजबूत डोर के सहारे पटरा लगाकर झूला तैयार किया जाता है। कुछ युवतियां पटरे पर बीच में बैठती हैं और कुछ युवतियों पटरे के दोनों किनारों पर खड़े होकर झूले को ‘पेंग‘ मारती हैं और झूले को गति देती हैं। झूला झूलते समय स्त्रियाँ समवेत स्वर में उन्मुक्त भाव से कजरी गाती हैं। जब काले-कजरारे बादल घिरे हो, बरखा की भीनी-भीनी फुहार पड़ रही हो, पेड़ो पर झूले पड़े हों, मन उमंग से मदमस्त हो, ऐसे में भला मन की अभिव्यक्ति गीतों में कैसे नहीं उतरेगी ? इन गीतों से व पावस की हरियाली से सम्पूर्ण वातावरण रोमांच से पूरित रहता है।

‘कजरी‘ नाम के विषय पर दृष्टि डाले तो वस्तुत: सावन में काले कजरारे बादलों के कारण इसका नाम ‘कजरी ‘ पड़ा। यद्यपि कजरी हर क्षेत्र में गाई जाती है परन्तु काशी (बनारस) व मिर्जापुर की कजरी विशेष प्रसिद्ध है। मिर्जापुर की कजरी तो सर्वप्रिय हैं इस सम्बन्ध में एक कहावत प्रसिद्ध है कि “लीला रामनगर की भारी, कजरी मिर्जापुर सरनाम“।

यहाँ कजरी तीज को कजरहवा ताल पर रातभर कजरी उत्सव होता है जिसे सुनने के लिए काफी संख्या में लोग एकत्रित होते हैं। मिर्जापुर की कजरी का अपना एक अलग रंग है। आज विषय विविधता की अपार सम्भावना है। शायद ही जीवन का कोई ऐसा पक्ष होगा जिसका उल्लेख इन गीतों में नहीं हुआ है।

भोजपुरी लोकगीतों के अन्तर्गत कजरी गीतों का विषय वैविध्य देखते ही बनता है। जीवन के कितना निकट है। इसका भी प्रमाण हमें मिलता है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक स्थिति का चित्रण, प्रकृति-

चित्रण, राष्ट्रप्रेम, पर्यावरणीय चेतना, मंहगाई, नशाखोरी, सामाजिक बुराइयों के साथ ही स्त्री की स्थिति-परिधि, संयोग वियोग का पक्ष, पीहर के प्रति प्रेम, परदेश गये पति की वेदना, हास परिहास, झूला लगाने से झूलने तक की बात, सखियों से ससुराल की चर्चा, गवना न कराये जाने का खेद भी प्रगट है। प्रेम का विशद् चित्रण के साथ-साथ नकारा, अवारा पति के कार्य व्यवहार के प्रति स्त्रियों के प्रतिरोधी स्वर भी इन गीतों में दिखाई देता है। इन सभी बातों का वर्णन कजरी गीतों को हृदयस्पर्शी बना देता है।

सामाजिक दृष्टिकोण से देखे तो परिवार के रिश्तों की खट्टी-मीठी नोकझोंक, पति-पत्नी का प्रेम, ननद-भौजाई व देवर का हास-परिहास, सब कुछ इन गीतों में देखने को मिलता है। प्राय: स्त्रियां सावन में अपने 'नईहर' आती है, झूला झूलती हैं, सखियों के साथ कजरी गाती हैं। भाई भी अपनी बहन को लेने के लिए बहन के घर जाता है। परन्तु एक नवविवाहिता 'नईहर' जाने के लिए तैयार नहीं है क्योंकि वह सावन में अपने पति के संग रहना चाहती है, इसी भाव की अभिव्यक्ति इस कजरी में है ।

सावन में जहाँ सभी स्त्रियां अपने नईहर जाती है ऐसे में भाई को वापस भेज देना, पति-पत्नी के प्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण है। जहां प्रेम है वहीं दु:ख भी है। पति के बिना सावन का महीना पत्नी के लिए असह्य पीड़ा भी देता है। इस कजरी में पत्नी का दु:ख कैसे चित्रित है, देखिये-

"चढ़त सवनवा अईले मोरा ना सजनवा रामा

हरि हरि दारून दु:ख देला दुनो जोबनवा रे हरि……..

सोरहो सिंगार करिके पहिरो सब गहनवा रामा

हरि हरि चितवत चितवत धुमिल भईल नयनवा रे हरि…

साजी सुनी सेज तड़फत बीतल रयनवा रामा

हरि हरि बैरी नाही निकले मोर परनवा रे हरि"

वही पत्नी के मायके अर्थात नईहर जाने पर पति के दु:ख का उल्लेख भी कजरी गीतों में मिलता है-

"मोरी रनिया अकेला हमें छोड़ गयी

मोसे मुख मोड़ गयी ना…….

रहे हरदम उदास, लगे भूख ना पियास

मोरा नन्हा करेजा अब तोड़ गयी

मोसे मुख मोड़ गयी ना……"

वह न केवल दु:खी है बल्कि पत्नी के नईहर जाने पर उलाहना भी देता है। सावन के महीने में भला कौन पत्नी अपने पति को छोड़कर नईहर जायेगी ? वह विवशता की अभिव्यक्ति इस गीत में देखिए-

‘हरे रामा सावन में संवरिया नईहर

जाले रे हरी…….

जउ तुहु गोरिया हो जईबु नईहरवा हो रामा

हरे रामा केई मोरा जेवना बनईहे रे हरी……”

पत्नी भी पति से अपने नईहर आने को कहती हैं। अपने ‘नईहर‘ का बखान भला कौन स्त्री नहीं करेगी। इस गीत में पति को आने के जिस भाव से वह कहती है निश्चय ही उसमें गर्वोक्ति का भाव भी निहित है। देखिए-

“राजा एक दिन अईत अपने ससुरार में…

सावन के बहार में ना…..

जेवना भाभी से बनवईती,

अपने हाथ से जेवइति,

झूला डाल देती नेबुला अनार में

सावन के बहार में ना……”

अशोक भाटिया

वसंत नगरी, वसई पूर्व जिला पालघर-401208

फोन 9221232130